Online at: https://researchtrendsjournal.com
Indexed Journal

ISSN No: 2584-282X
Peer Reviewed Journal

INTERNATIONAL JOURNAL OF TRENDS IN EMERGING RESEARCH AND DEVELOPMENT

Volume 4; Issue 1; 2026; Page No. 94-96

Received: 20-10-2025
Accepted: 30-11-2025
Published: 23-01-2026

ग्रामीण जीवन की विसंगतियों और नागार्जुन का साहित्य

डॉ. संगीता

प्रवक्ता, हिन्दी, राजकीय बालिका इण्टर कॉलेज कड़ा, जनपद कौशाम्बी, उत्तर प्रदेश, भारत

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18720707

Corresponding Author: डॉ. संगीता

सारांश

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में भारतीय समाज की वास्तविक स्थितियों का सशक्त और यथार्थ चित्रण किया है। उनका साहित्य समाजवादी यथार्थ, जनवादी चेतना और सामाजिक परिवर्तन की भावना पर आधारित है। उन्होंने ग्रामीण जीवन की समस्याओं, अंधविश्वास, जाति-भेद, शोषण, पाखण्ड और सामाजिक विसंगतियों का खुलासा करते हुए इनके विरुद्ध संघर्ष और जागरूकता का संदेश दिया है। नागार्जुन ने किसानों, मजदूरों, स्त्रियों और शोषित वर्ग के पक्ष में खड़े होकर वर्ग-संघर्ष, समानता और सामाजिक नवनिर्माण की आवश्यकता पर बल दिया है। उनका साहित्य समाज सुधार, राष्ट्रीय चेतना और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के प्रति प्रतिबद्ध है।

मूलशब्द: नागार्जुन, समाजवादी यथार्थ, जनवादी चेतना, सामाजिक यथार्थ, वर्ग-संघर्ष, ग्रामीण जीवन, अंधविश्वास, शोषण, सामाजिक परिवर्तन

प्रस्तावना

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में यथार्थ स्थिति का खुलासा किया है। नागार्जुन की औपन्यासिक सृष्टि का अभिप्रेय और आधार जनवादी तत्वों में दृढ़ आस्था, व्यंग्यपरक शिल्पग्रह और जीवन की सम्पूर्ण एवं व्यापकता का वहन करते हुए स्वस्थ सामाजिक धरातल की स्थापना की है। प्रेमचन्द का दृष्टिकोण सामाजिक यथार्थवाद की देन हैं, नागार्जुन की जीवन दृष्टि समाजवादी यथार्थ पर आधारित है। प्रेमचन्द की उभारी गई समस्याओं को आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्तर पर नागार्जुन ने व्याख्यायित किया है। नागार्जुन का यथार्थवादी लेखन राष्ट्रीयता और सामाजिक नवनिर्माण के लिए आकुल रहता है। वह लेखन को अपना हथियार बनाते है सिर्फ शोषण-दमन का जिक्र भर वे नहीं करते, बल्कि उसके समूल नाश के लिए भी प्रेरित करते हैं। हमारे समाज में बड़ा मलवा है, गन्दगी है, कूड़ा। एक स्वस्थ और आदर्श समाज की स्थापना के लिए बहुत बड़ा जमादार चाहिए। रुढ़ियों, सड़ी-गली परम्पराओं में बंधा यह देश सही जिन्दगी जीने के लिए छटपटा रहा है। जिन रुढ़ियों से समाज का जर्जर बना डाला है, उनको नकारने के लिए कोने से जुआना होगा इसलिए यथार्थ बोध से गुजरते हुए चतुर्मुखी सजगता के लिए नागार्जुन संकेत करते चलते है।

भारत गाँवों का देश है और गाँव अन्धविश्वास, पाखण्ड और रुढ़ियों को ढोते हुए खिसक रहा है। नागार्जुन ग्रामों को इनसे मुक्ति दिलाना चाहते है। उन्होंने भूत-प्रेत, शकुन-अपशकुन,

बलि प्रथा, जेल-मेल, गुरुदीक्षा, पित्तर दान, आदि लोकाचार का अंकन करते हुए उनकी निर्रथकता पर जोर दिया है – "बरहम बाबा को फूल-पत्र, पितरों को गया-पिण्ड बाबा कुशेरनाथ को घी-दूध चढ़ाया जाता है।" [1] जात-पाँत, ऊँच-नीच का भेद तो यहाँ पर सिर चढ़कर बोलता है। इस देश का यह कोढ है। नागार्जुन जाति की उच्चता पर लानत भेजते है। 'रतिनाथ की चाची' में बुधना चमार की औरत गर्भपात कराने में उस्ताद है, उस चमारिन की मानवीय संवेदना द्रष्टव्य है– "एक बात कहती हूँ माफ करना बड़ी जात वालों की तुम्हारी यह विरादी बड़ी मालिच्छ बड़ी निठुर होती है, मलिकाइन! हमारी भी बहूँ-बेटियाँ राँड़ हो जाती है, पर हमारी विरादरी में किसी के पेट से आठ-आठ, नौ-नौ महीनें का बच्चा निकाल कर जंगल में फेंक आने का रिवाज नहीं है ओह कैसा कलेजा होता है तुम लोगों का मइया री मइया" [2].

आजकल धर्म-मठ राजनीति से सीधा सम्पर्क रखते है। बड़े-बड़े प्रशासक और राजनेता बाबाओं की चरणरज एवं चरणामृत को प्राप्त करने के लिए दिन-रात इन महापुरुषों की आराधना में लगे रहते हैं इन बाबाओं का वर्तमान राजनीति में इतना दखल है कि इनके इशारे से उनके शिष्यों को बड़े-बड़े पदों, ओहदों पर आसानी से प्राप्त कर लेते हैं। यह स्थिति सारा देश देख रहा हैं। इन मक्कार बाबाओं की लीला मंत्री-नेताओं पर किस कदर छायी हुई है – नागार्जुन इन सबसे बखूबी परिचित थे। जो देश की बागडोर पकड़कर बैठे हैं, देश में क्या हो रहा है, क्या होना चाहिए उनके लिए महत्वपूर्ण नहीं, अपनी किस्मत चमकाने के चक्कर में बाबाओं के चक्कर लगाते हैं। लेखक की टिप्पणी है – "तिरंगा वाले तो मठ वालों को मिलाकर ही चलते हैं, उन्हें मदद मिलती है मठ से।" [3] इन सच्चाई को नकारा नहीं जा सकता कि सेठ, साहूकार, उद्योगपति, धन्नासेठ, जमींदार अपनी काली कमाई को सफेद करने के चक्कर में स्वाभाविक रूप से इन धर्म ध्वजों की छाया में चादर तान कर सोते है। मठों में होने वाली आमदनी का कोई लेखा-जोखा नही; इसलिए आयकर एवं बिक्रीकर बचाने के लिए पूरे देश में दान लीला का स्वांग रचा जाता है। नागार्जुन ऐसे बाबाओं को भीतरी बाहरी दुनिया से परिचित कराना चाहती है। एक स्वस्थ समाज की कल्पना करना चाहते है। ऐसे भ्रष्ट साधुओं की निरर्थकता और व्यर्थता सिद्ध करते हुए नागार्जुन समाज पर भार बनने वाले साधुओं से परहेज करते है। नागार्जुन को जनता में देश-प्रेम, एकता और राष्ट्रीयता की भावना का प्रसार करने वाला ऐसा व्यक्ति चाहिए जो सैनिक प्रशिक्षण देकर हमें राष्ट्रीय विरोधी खतरे का सामना करने के लिए तैयार कर सके जमनिया मठ में प्रवेश द्वार पर दूर से ही चमक रहा है – "चन्द्रशेखर आजाद सैनिक प्रशिक्षण शिविर, नजदीक से देखने पर छोटे अक्षरों में दीख रहा है – मुख्य अधिष्ठाता स्वामी श्री अभयानन्द" [4] "ढोंग, मिथ्याचार, टोना, टोटका, अंधविश्वास और अंध श्रद्धा-पाखण्ड ने लोक चेतना को दबोच रखा है। बेजुबान निरीह पशु बलि-भूत-प्रेत पर विशअवास आज भी समाज करता है। अपनी निजी स्वार्थ सिद्ध हेतु कुकृत्य करके मानव का जीन नही ऊबता।" [5].

नागार्जुन विचारों से मार्क्सवादी माने जाते है किन्तु उनकी वैचारिकता यत्र-तत्र मार्क्सवादी को छोड़कर आगे बढ़ती है। पीड़ितों और शोषितों के प्रति संवेदना उनकी विचारदारा का उद्गम है। वे निम्न वर्ग कहे जाने वाले के शोषण से क्षुब्ध और आक्रोश युक्त है। किसानों को दुःख आतंक की जिन्दगी से मुक्ति दिलाने के लिए वे संघर्ष का नारा देते हैं। बलचना नारा लगाता हैं – "जमीन किसकी-जोते-बोए उसकी! इन्किलाब जिन्दाबाद! मजदूर-एकता जिन्दाबाद!" [6].

नागार्जुन ने साम्यवादी विचारधारा का आश्रय ग्रहण करते हुए वर्ग-संघर्ष में आस्था प्रकट की है। उन्होंने जगह-जगह हँसिया-हथौड़ा और लाल झण्डे वाली पार्टी का जिक्र किया है – "लाल झण्डे वाले जिद्दी होते है, झण्डा उठा लेंगे, तो परेशान कर देंगे, मिल वाले की नाक का पानी निकाल देंगे।" [7] नागार्जुन ने साम्यवाद को, निम्न वर्ग को उसके अधिकार दिलाने में तत्पर दिखाया है। वे दीन-दलितों के पक्षधर बनकर वास्तविक जीवन की भाँति अपने उपन्यासों में भी उनके पक्ष में खड़े रहते है। नागार्जुन नारी पात्रों के द्वारा समस्त नारी समाज के उन्नयन और नवीन प्रगतिशील चेतना उभारने का पूरा प्रयास करते हैं। समाज से त्रस्त महिलाओं को जब समाज वापसी के लिए नहीं स्वीकारता तो "जिस समाज में हजारों की तादाद में विधवाएं रहेंगी वहाँ यही सब तो होगा।" [8] स्त्रियों के स्वतंत्रता एवं स्वालम्बन को बाधा पहुँचाने वाली सास्कृतिक दुहाइयों को नागार्जुन ने कटु निन्दा की है। वह सामाजिक सुधार के सभी अवसरों की तलाश करता है उनके लेखन ने पुरानी परंपराओं, अंधविश्वासों और जाति-पाँति के ढकोसलों के खिलाफ उनकी लेखनी ने प्रहार किया है। हिन्दू जाति के साथ, लिपटी निरर्थक रूढ़ियों को चमगादड़ कहकर उनकी खिल्ली उड़ाते हुए उन्हे प्रभावहीन करने का बाबा (नागार्जुन) ने प्रयास किया है। ग्रामीण नवनिर्माण के लिए उनकी प्रगतिशील विचारधारा है कि ग्रामीण स्वयं श्रम करें, अपनी समस्याओं के प्रति सतर्क रहें और उन्हें स्वयं सुलझावें। नागार्जुन के पात्र स्वावलम्बी जीवन के पुरस्कर्त्ता हैं।

नागार्जुन किसी समस्या के समाधान हेतु किसी तीसरी शक्ति में विश्वास नहीं करते, बल्कि जो लोग समस्याग्रस्त है, उनके समूह और संगठन के द्वारा समाधान हेतु संघर्ष करने की प्रेरणा देते है। यह आत्म निर्भरता उनके स्वाभिमानी चरित्र का प्रमाण है। नागार्जुन के संघर्षरत कथा-चरित्र धर्मयुद्ध ही लड़ते हैं। सत्य के द्वारा ही मूल्यों की लड़ाई लड़ सकते हैं। संघर्ष हमसे कुछ छीनता नहीं, बल्कि बहुत कुछ देता है। संघर्ष ही वास्तविक गति है – यह नागार्जुन के उपन्यास साहित्य की मूल स्थापना है।

नागार्जुन की सारी लड़ाई भूख और भ्रष्टाचार के खिलाफ है। पेट को भरने के लिए श्रम एवं ईमानदारी के जीवन मूल्यों का परिपालन न करने वालों के खिलाफ है। इस बिन्दु पर वे कबीर व प्रेमचन्द के निकट हैं। नागार्जुन की संवेदनाएँ सीधे देश-प्रेम से जुड़ी है। वे एक सजग पहरुए की भाँति समाज में जागरण के लिए पैरवी करते हुए निरन्तर उठते जाने का प्रोत्साहन, प्रेरणा और बल देते हैं। "विचारों से नागार्जुन मार्क्सवादी माने जाते रहे हैं, पर नागार्जुन के विचार मार्क्सवादी के समानान्तर और कहीं-कहीं उसे छोड़कर अग्रसर हुए हैं। मार्क्सवाद का प्रभाव उन पर अपयश है पर, वे शुद्ध रूप से मार्क्सवादी हैं, हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते।" [9] यह सच है कि नागार्जुन को किसी पार्टी कार्यालय का टाइपराइटर नहीं बल्कि हिन्दुस्तान के आम आदमी का ही राइटर कहा जाएगा। उन्होंने अपनी कृतियों में शोषित, पीड़ितों, मेहनतकशों और किसानों की प्रति गहरी अनुभूति उद्घटित की और उनका साथी रचनाकार होने की जिम्मेदारी निभायी। गाँवों के नवनिर्माण, अंधविश्वासों, भेद-भावों के उन्मूलन के लिए कटिबद्ध होकर समाज-सुधार के लिए लड़ते रहे और इन मूल्यों के लिए लड़ने के कारण ही नागार्जुन कबीर और प्रेमचन्द्र के वास्तविक उत्तराधिकारी भी हैं।

नागार्जुन की हर रचना एक तारीख का बयान है। हालातों का बयान करते हुए अपने युग की संचेतना के वाहक बन जाते है। उनका साहित्य जीवन से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा है – "साहित्य का जीवन से दुहरा सम्बन्ध होता है। एक क्रिया रूप में दूसरा प्रतिक्रिया रूप में वह जीवन की अभिव्यक्ति है और प्रतिक्रिया के रूप में उसका निर्माता और पोषक है।" [10] यही प्रतिक्रिया कभी पुचकारती है, कभी व्यंग्य करके कोंचती है, कभी आक्रोश से उबलते हुए अक्षर गढ़ती है तो कभी क्रांति की मुट्ठियाँ भी भींचती है। बाबा नागार्जुन अपने फक्कड़ाना अंदाज में साहित्यिक संयम-नियम, आचार-विचार के कभी हिमायती नहीं रहे। उनके जीवन में ही सर्वत्र अभाव की टकराहत है। उनके साहित्य में भी कुछ न कुछ अभाव टकाराता रहा है आम भारतीय जनजीवन भी अभावग्रस्त है भरी-पूरी बात सिर्फ इतनी है कि जनता के जीवन से हटकर नागार्जुन की कलम कभी नहीं चली। नागार्जुन आदर्श साहित्य रचने में नहीं, वह समाज रचने में लगे रहे, जिसके आदर्श होंगे– बलचनमा, दुःखमोचन और मोहनमाँझी।

सन्दर्भ

1. बलचना - नागार्जुन, पृ. 135
2. रतिनाथ की चाची - नागार्जुन, पृ, 24
3. जमनिया का बाबा - नागार्जुन, पृ. 121
4. नई पौध, बाबा बटेसरनाथ - नागार्जुन, पृ. 92
5. बलचनमा - नागार्जुन, पृ. 134
6. जमनिया का बाबा - नागार्जुन, पृ. 98
7. उग्रताए - नागार्जुन, पृ. 34
8. जमनिया का बाबा - पृ. 122
9. नागार्जुन जीवन और साहित्य - डॉ. प्रकाश चन्द्र भट्ट, पृ. 247
10. विचार और निष्कर्ष - डॉ. नगेन्द्र, पृ. 25

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.